हुसैन अ० और हिन्दुस्तान का सम्बन्ध

अल्लामा 'नज्म' आफ़न्दी साहब क़िब्ला

तेरह सौ वर्ष की बात है, अरब देश और कर्बला के रेतीले मैदान में फ़ुरात की नहर के किनारे एक लड़ाई हुई थी, जिसमें एक तरफ बहत्तर संत, सच्चाई के तरफ़दार, जनता का दुख दर्द रखने वाले, भलाई के पालनहार, बुराई से दूर रहने वाले, अच्छे कर्मों के उपदेशक हुसैन, और उनके मुसाफ़िर साथी थे। दूसरी तरफ उस समय के बादशाह यज़ीद की सेना के कम से कम 30,000 आदमी थे जो हुसैन[अ०] और उनके साथियों को इस कारण क़त्ल करने के लिए भेजे गए थे कि हुसैन ने उस पापी हुकूमत को मानने से इनकार कर दिया था जो ज़बान से कहने के लिये मुसलमानों की हुकूमत थी लेकिन उसका चलन मुसलमानों के पैग़म्बर[स०] (हुसैन[अ०] के नाना) के बताये हुए और सिखाए हुए तरीक़ों से बिल्कुल अलग था। ग़रीब आदमी तलवार की हुकूमत और माया की ताक़त चक्की के दो पाटों के बीच में बहुत बुरी तरह पिस रहे थे। अन्याय और अपराध के सिवा न्याय और दया धर्म का कहीं नाम न था।

हुसैन[अ०] ग़रीब जनता की दुख-दर्द से भरी चीख़ पुकार सुनकर इनके बार-बार के बुलावे से मजबूर होकर घर से निकले थे और गर्मी और धूप में कई महीनों का सफ़र करके कर्बला तक पहुँचे थे और फ़ुरात के किनारे डेरे डाल रहे थे कि यज़ीद के लशकर ने आकर चारो तरफ़ से घेर लिया और उन्हें नदी के किनारे उतरने से रोक दिया। हुसैन[अ०] लड़ाई लड़ना और ख़ून बहाना नहीं चाहते थे। उन्होंने नदी से दूर हटकर जलती हुई रेत पर अपने ख़ेमे लगा लिये। हुसैन[अ०] के साथ औरतें और छोटे बच्चे भी थे जिनके कारण हुसैन[अ०] के सूरमा साथी लड़ने के लिए आमादा हो गए थे लेकिन हुसैन[अ०] ने उनको समझा बुझाकर बाज़ रखा वरना जो लड़ाई छः सात दिन के बाद हुई वह उसी वक़्त पानी के लिए शुरु हो जाती। इस छः सात दिन के अन्दर यज़ीदी लश्कर के सेनापति और हुसैन[अ०] से कई बार बातचीत हुई मगर कोई समझोता न हो सका। यज़ीद का संदेश यह था कि हुसैन यज़ीद की हुकूमत को मान लें, जनता की चीख़ पुकार पर कान न धरें। जो अपराध हो रहा है, उसको होने दें, तब उनकी जान बच सकती है। अगर हुसैन[अ०] अपनी और आपने साथियों की जान बचाने के लिए इस पर राज़ी हो जाते तो हुसैन[अ०] के नाना मुसलमानों के रसूल[स०] ने अपनी सारी उम्र जो भलाई का प्रचार किया था, आदमी को सुधारने की जो अनथक कोशिश की थी, दया-धर्म का जो सबक़ दिया था, सब अकारत हो जाता और आज मुसलमानों को संसार में मुँह दिखाने की जगह न रहती। दुनिया वालों को अंधेरे उजाले का फ़र्क़ न मालूम होता और मुसलमानों के धर्म का चिराग़ जो थोड़ा बहुत रौशनी दे रहा है, बिल्कुल ही बुझ कर रह जाता।

हुसैन[अ०] जब घर से निकले हैं तो उनके साथ भी बहुत आदमी थे लेकिन उनके बार-बार यह बात कहने से कि "मैं हुकूमत के लोभ और लालच में नहीं जा रहा हूँ। मेरे साथ रहने वालों के लिए मौत का सामान है" लोग साथ छोड़ते चले गये और बहत्तर जियाले और सच्ची मोहब्बत करने वाले रह गये जिनको यह धुन थी इस धर्मात्मा दैवीय रूपी मनुष्य के साथ सच्चाई के प्रचार में जान देकर अमर हो जाएं।

हुसैन[अ०] ने अपने दुश्मनों से कहा कि तुम लोगों में बहुत से ऐसे आदमी हैं जिन्होंने मुझे चिट्ठियाँ

लिखकर बुलाया था और अब तुम लोग अनजान हो गए हो तो मुझे मदीने वापस जाने दो, मैं लड़ाई झगड़ा करना और ख़ून बहाना नहीं चाहता। मगर जब किसी ने इन बातों पर कान न दिये, उस वक़्त हुसैन[अ०] ने एक आख़िरी बात यह कही कि 'अच्छा मुझे रास्ता दे दो कि मैं हिन्दुस्तान चला जाऊँ''।

भारत के सपूतों! यहाँ से हुसैन[अ०] और हिन्दुस्तान का सम्बन्ध शुरु होता है। कैसे मीठे शब्द हैं कैसे भरोसे की छावों में कहे गये थे। सारा संसार पड़ा हुआ था। ईसाईयों के बहुत से मुल्क थे, चीन था, जापान था अविंसीनिया (हबश का देश) था जहाँ उनके नाना के वक़्त में मुसलमान मक्के से जाकर मेहमान रह चुके थे मगर हुसैन[अ०] ने किसी तरफ़ ध्यान न दिया। उन्होंने अपने रहन-सहन के लिए हिन्दुस्तान का चुनाव किया था और हिन्दुस्तान ही का नाम उनकी ज़बान पर आया था। वह जानते थे कि हिन्दुस्तान के रहने वाले ब्राहम्ण, राजपूत, वैश्य कोई जीव हत्या को पसन्द नहीं करता। यह लोग मेहमान का दुख दर्द समझेंगे और उनका आदर करेंगे। (मुझे रास्ता दे दो मैं हिन्दुस्तान चला जाऊँ) हुसैन[अ०] की ज़बान से निकले हुए इन शब्दों का ज़िक्र किताबों में मौजूद है। अभी 16 मार्च 1958[ई०] को दाऊद अली मिर्ज़ा, सदस्य पार्लियामेण्ट ने पार्लियामेण्ट के इजलास में मस-ल-ए-कशमीर पर जो तक़रीर की है उसमें इस बात का हवाला दिया है कि हज़रत इमाम हुसैन हिन्दुस्तान आना चाहते थे।

(अख़बार 'सियासत', हैदराबाद दकन, 17 मार्च 58[ई०])

हुसैन[अ०] और हिन्दुस्तान का यह सम्बन्ध दिन बदिन मज़बूत होता गया और एक दिन वह समय आया कि जब भारत देश को अंग्रेज़ों की गुलामी से आज़ाद करने वाले गाँधी जी जैसे बड़े आदमी ने जब वह पहली बार हुकूमत का क़ानून तोड़ने उठे थे और नमक बनाने जा रहे थे, अपनी ज़बान से यह बात कही थी कि मैं हज़रत इमाम हुसैन[अ०] के अनुकरण में अपने साथ बहत्तर आदमी हुकूमत के मुक़ाबले के लिए लेकर जा रहा हूँ। गाँधी जी की इज़्ज़त हिन्दुस्तान के हर आदमी के दिल में उतनी है कि यहाँ का हर बच्चा जवान और बूढ़ा उन्हें बापू जी कहकर पुकारता है और वह भारत देश के बाप माने गए हैं। गाँधी जी के मन में हुसैन[अ०] के नाम और काम की इतनी इज़्ज़त थी कि उन्होंने देश की भलाई और हुकूमत से लड़ाई का काम हुसैन[अ०] का नाम लेकर शुरु किया। यह है हुसैन[अ०] और हिन्दुस्तान का सम्बन्ध। अभी हमें इस सम्बन्ध के प्रमाण में बहुत सी बातें कहना है मगर पहले इस लड़ाई का समाचार थोड़ा बहुत सुना देना ज़रूरी है।

दुश्मनों के लश्कर ने हुसैन[अ०] की कोई बात नहीं मानी और हुसैन[अ०] ने दुश्मनों की बात, जिसके मानने से इज़्ज़त, आबरु, धर्म और जनता की सेवा का महाकाज सब पर पानी फिर जाता, मन्ज़ूर नहीं किया और लड़ाई ठहर गई।

दुश्मनों ने पहला काम यह किया कि जो किसी धर्म और देश के आदमियों ने नहीं किया होगा कि हुसैन[अ०] के ख़ेमों और नहर के बीच में फ़ौज की एक दीवार खड़ी कर दी और पानी ले जाने का रास्ता बन्द कर दिया। वह पानी जिसको पैदा करने वाले ने अपने सब बन्दों के लिए, वह अमीर हो या ग़रीब हो, बादशाह हो या फ़क़ीर हो, बग़ैर किसी मोल तोल के संसार की पैदाईश के पहले दिन से आम कर रखा है और जो कभी जानवरों के लिए भी बन्द नहीं किया गया। पानी न मिलने से मोहर्रम की दस तारीख़ तक यह हाल हो गया कि प्यास के मारे सब की ज़बानें सूख कर तालुओं से चिपट गयीं। बूढे और जवान आदमियों ने बड़े संतोष और धीरज से काम लिया लेकिन बच्चों की ज़बानों से पानी-पानी और प्यास-प्यास की आवाज़ें ख़ेमों में गूँज कर हुसैन[अ०] के साथी औरतों और मर्दों के दिलों को तड़पा रहीं थीं।

पिछली रात को हुसैन[अ०] ने अपने बहत्तर आदमियों को एक ख़ेमे में इकटठा करके वह तक़रीर की थी जो तेरह सौ बरस से आज तक हर आदमी को अचम्भे में डाल रहीं है। हुसैन[अ०] ने कहा कि मेरे दोस्तो, भाईयों, बेटों और भाँजों! सब मेरा साथ देने से हाथ उठा लो और मुझे अकेला छोड़कर जिस तरफ चाहो चले जाओ मैं तुम्हें खुले दिल से इजाज़त देता हूँ। मुझे तुम्हारे चले

जाने से कोई रंज न होगा। ये लोग मेरे ही लहू के प्यासे हैं। इन्हें तुमसे कोई सरोकार नहीं है। यह तुम से कुछ नहीं बोलेंगे। इन्होंने मेरी सहायता को आने वालों का रास्ता रोका है, मुझे छोड़कर जाने वालो से यह कोई झगड़ा नहीं करेंगे। मगर कोई इस बात पर राज़ी न हुआ। अब हुसैन[अ०] ने वह दिया जो ख़ेमे में जल रहा था बुझा दिया कि जो आदमी अपने मन में अपनी जान बचाकर चले जाने का विचार कर रहा हो और जिसकी आँखें देखते जाते हुए लाज आती हो, वह अंधेरे में चला जाए। मगर ऐसा नहीं हुआ। ये लोग अपनी धुन के पक्के और अपने इरादे के मज़बूत रहे।

उसी रात को जब हुसैन[अ०] अपने ख़ेमे में साथियों की जानें बचाने की कोशिश करते रहे थे, औरतों के ख़ेमों में माएँ अपने-अपने बच्चों को, बहनें अपने भाईयों को बाप दादा की बहादुरी की कहानियाँ सुना-सुना कर दुश्मन से लड़ने और हुसैन[अ०] के साथ जान देने के लिए तैयार कर रही थीं।

सुबह होते ही दुश्मन की फ़ौज ने मैदान में निकल कर अपने पैर जमा लिये। हुसैन[अ०] और उनके साथी भी नमाज़ पढ़कर सामने आ गए। हुसैन[अ०] ने फिर एक बार दुश्मन की फ़ौज की तरफ़ मुँह करके और उनको पुकार के एक उपदेश दिया। लड़ाई से बाज़ आने (फिर जाने) के लिए समझाया और अच्छी तरह यह बात उनको समझा दी और जतला दिया कि मेरा द्वोष नहीं है, मैंने किसी का कुछ नहीं बिगाड़ा और सिवाए भलाई के किसी के साथ कोई बुराई नहीं की। इस उपदेश को सुनकर चार आदमी दुश्मन की फ़ौज से निकल कर हुसैन[अ०] की तरफ़ आ गए। संसार ने देख लिया कि सच्चाई में कितनी ताक़त और सत्य की आवाज़ में कितना कसबल होता है। यह लोग यह समझकर जान बूझकर उस तरफ़ आये थे, जहाँ सिवाए भूक प्यास मौत के और कुछ न था। जिन पुस्तकों में इस लड़ाई का ज़िक्र है उनकी छानबीन से यह भी मालूम होता है कि रात के वक़्त भी बीस आदमी यज़ीद के लश्कर से निकलकर हुसैन[अ०] के साथियों में आकर मिले थे। यह समाचार इस बात का प्रमाण है कि हुसैन[अ०] की तरफ़ सच्चाई और रौशनी थी और उनके दुश्मनों की तरफ झूठ का अन्धेरा।

लड़ाई शुरु हुई और सूरज डूबने से पहले ख़त्म हो गयी। 72 तीन दिन के प्यासे आदमियों का 30,000 ख़ून के प्यासे आदमियों से मुक़ाबला क्या जो कटोरे भर-भर कर पानी पी भी रहे थे और धरती पर भी लुँडा रहे थे। मगर हुसैन[अ०] के प्यासे साथी क्या बहादुर थे! एक-एक मरने वाला पचास-पचास, सौ-सौ और इससे भी अधिक दुश्मनों को ठिकाने लगाकर ज़मीन पर गिरा है। हम पूरी लड़ाई और एक-एक हुसैन[अ०] के सावंत साथी का हाल कहाँ तक बयान कर सकते हैं! बहुत सी बातें कहने के क़ाबिल हैं मगर इतना वक़्त कहाँ से लायें, फिर भी एक-दो बातें ज़रूर कहना है।

दोपहर के बाद जो नमाज़ पढ़ी जाती है और जिसे जुहर की नमाज़ कहते हैं, लड़ते-लड़ते उसका वक़्त आ गया। दुश्मन के लश्कर से बराबर तीर आ रहे थे, मगर ये अल्लाह को याद रखने वाले बन्दे कैसे नमाज़ छोड़ सकते थे? हुसैन[अ०] इमाम थे। वह सबके आगे और सब उनके पीछे नमाज़ पढ़ने के लिए खड़े हो गये मगर हुसैन[अ०] के दो मनचले साथियों ने ऐसा जीवटी काम किया कि जिसको सुनकर बड़े-बड़े सूरमाओं के होश उड़ जाते हैं। इन दो मौत से खेलेने वाले सिपाहियों ने नमाज़ नहीं पढ़ी। यह दोनों हुसैन[अ०] के सामने खड़े हो गये और जितने तीर आए अपने सीनों पर लेते रहे। नमाज़ ख़त्म होते ही उन में का एक बहादुर गिरा और ख़त्म हो गया और दूसरा फिर लड़ाई में शरीक हुआ। तलवार खींचकर दुश्मनों पर जा पड़ा और बहुत से दुश्मनों को मार कर अपनी जान दे दी। ऐसे मौक़े पर हर बहादुर की यह इच्छा होती है कि दो चार दस पाँच को मार कर मरे लेकिन इन दो आदमियों ने अपने दिल पर कितना बड़ा पत्थर रखा होगा, जब ये समझ कर हुसैन[अ०] के सामने खड़े हुए थे कि हमें सिर्फ़ तीर खाना है, तलवार चलाना नहीं है। बहादुरी के ऐसे नमूने और वफ़ादारी की ऐसी मिसालें संसार में शायद ही कुछ देखने या सुनने में आयी होंगी।

हुसैन[अ०] के साथियों में 12-14 वर्ष के बच्चे भी

थे, और अट्‌ठारह वर्ष का जवान हुसैन[अ०] का लाडला बेटा भी था। सब छोटे बड़े ख़ूब-ख़ूब लड़े। अट्‌ठारह वर्ष वाला जियाला दुश्मनों की सफ़ों में घुसकर और लड़ भिड़ कर फिर निकल आया। बाप को आकर सलाम किया। अपनी प्यास की तकलीफ़ बयान की और फिर वापस जाकर लड़ा और शहीद हो गया। अब हमें एक 37 वर्ष का जवान हुसैन[अ०] के सौतेले भाई अब्बास का हाल और हुसैन[अ०] के छः महीने के बच्चे का समाचार और बयान करना है।

औरतों और बच्चों को प्यास की तकलीफ़ मर्दों से कहीं ज़्यादा थी। यह देखकर अब्बास ने एक सूखी मश्क भी अपने साथ रख ली थी। यह छोटी सी फ़ौज के अफ़सर थे। लश्कर का निशान भी उनके कन्धे से लगा हुआ था। उन्होंने एक बार भाईसे इजाज़त ली और दरिया पर तीर की तरह चले और ऐसी तलवार चलाई कि बहुत से आदमियों को गिराकर, भगाकर और लोहे की सफ़ों को तोड़कर किनारे पहुँच गये। ख़ुद पानी नहीं पिया, मश्क पानी से भर ली और उसी तरह तलवारें मारते हुए वापस आ रहे थे, किसी दुश्मन के वार से एक हाथ कट कर गिर पड़ा। फ़ौरन ही दूसरे हाथ में तलवार लेकर रास्ता साफ़ करने लगे। अभी ज़्यादा दूर नहीं गये थे कि दूसरा हाथ भी कटकर बेकार हो गया। इस हालत में घोड़े को एड़ देते हुए मश्क के तसमे को दाँत से दबाए हुए हुसैन[अ०] के ख़ेमों की तरफ़ बढ़े चले जाते थे कि इतने में मश्क के ऊपर एक तीर आकर लगा और पानी बहने लगा। जिस मतलब से हाथ कट जाने पर भी मश्क छाती से लगाए बढ़े चले जा रहे थे वही बाक़ी नहीं रहा तो हौसला भी टूट गया। घोड़े से गिरे। मश्क और निशान छाती से लगाए हुए दुनिया से रुख़सत हो गए।

अब छः महीने के बच्चे की बात सुनो। छः महीने के बच्चे में क्या जान होती है! माँ का दूध सूख गया, पानी का पता नहीं, अरब देश की गर्मी, जलती हुई धूप में ख़ेमे, बच्चे की हालत बिगड़ गयी। हुसैन[अ०] अब अकेले थे और इस आख़िर वक़्त में बीबियों और बच्चों से रुख़सत होने के लिए जिनमें एक चार वर्ष की लाडली बच्ची भी थी, हुसैन[अ०] ख़ेमे में गए और वहाँ छः महीने के बच्चे, अली असग़र को देखा कि प्यास की तकलीफ़ से ऐसा निढाल हो रहा है कि इसके जीने की आशा बाक़ी नहीं रही है। हुसैन[अ०] ने सोचा कि शायद यह लोग तरस खाकर इस बच्चे को दो बूँद पानी पिला दें और इसकी जान बच जाए। इस सोच विचार के बाद माँ की गोद से लेकर मैदान में आ गए। दुश्मनों को इसकी हालत दिखायी और कहा कि तुम अपने हाथ से इसे पानी पिला दो। दुश्मनों के लश्कर में हलचल सी पैदा हुई थी कि सेनापति के हुक्म से एक पत्थर दिल वाले आदमी ने ताक कर ऐसा तीर बच्चे के गले पर लगाया कि वह तड़प के बाप के हाथों पर तमाम हो गया। इस संसार में ऐसा अपराध कभी न देखने में आया था, न सुनने में। करबला के सामचार का यह ऐसा दुख भरा क़िस्सा है जिसको सुनकर हर आदमी के आँसू निकल आते हैं और हर धर्मी और अधर्मी का दिल सीने में तड़प जाता है।

अब दुश्मन हुसैन[अ०] की जान लेने के लिए बढ़े और चारो तरफ़ से हज़ारों ने घेर लिया। हुसैन[अ०] कोई मामूली आदमी नहीं थे, वह बड़े सूरमा थे और कमज़ोरों की तरह बग़ैर हाथ पाँव हिलाये जान देना गवारा नहीं कर सकते थे। मुसलमानों का धर्म यह है कि अपनी तरफ़ से पहल न करो, मगर जब तुम पर कोई हाथ उठाये तो पूरी ताक़त से मुक़ाबला करो फिर तुम पर कोई दोष नहीं है। जिन लोगों ने ऐसा नहीं किया, वह बादशाह हों या फ़क़ीर, मुसलमानों को और मुसलमानों के धर्म को बदनाम करने वाले हैं। यह धर्म हुसैन[अ०] के नाना ही का तो फैलाया हुआ था। हुसैन[अ०] से ज़्यादा कौन समझ सकता था जो अपनी ज़बान और अपने काम से इसकी सेवा और इसका प्रचार करते रहे।

हुसैन[अ०] 3 रोज़ से भूखे और प्यासे थे। ज़ख़्मों से चूर-चूर हो रहे थे। सब भाई, बेटे, भतीजे और बचपन के मित्र आँखों के सामने अपनी जानें दे चुके थे। एक छः महीने का बच्चा तो उनकी गोद ही में तीर से ज़बह कर दिया गया था। ऐसी हालत में आदमी के हवास बाक़ी नहीं रहते मगर हुसैन[अ०] के साथ सत्य की शक्ति और धर्म की सहायता थी। पैदा करने वाले की तरफ़

ध्यान लगाए हुए और ये कहकर कि मुझे ख़ून बहाते हुए अफ़सोस होता है लेकिन ये लोग मुझे इस पर मजबूर किये देते हैं। तलवार खींच ली और ऐसा डटकर मुक़ाबला किया कि तीन मर्तबा दुश्मन के पूरे लश्कर को पीछे हट जाना पड़ा और किसी में सामने आने का साहस बाक़ी नहीं रहा। अब दूर से तीरों की बौछार हो रही थी और पत्थर फेंक-फेंक कर ज़ख़्मी किया जा रहा था। किताबें हमें बताती हैं कि कई सौ आदमी इस वक़्त हुसैन[अ०] के हाथ से मारे गए हैं। हुसैन[अ०] अब भी किसी के बस के नहीं थे, मगर उस नमाज़ का वक़्त आ गया था जो सूरज डूबने से पहले पढ़ी जाती थी। तलवार नियाम में करके घोड़े से उतरे और दोनों हाथों से कर्बला के मैदान की मिट्टी जमा करके सजदा करने की जगह बनायी और पूरी शान्ति और संतोष के साथ नमाज़ शुरु कर दी। जिस वक़्त सजदे में गए हैं, ये भागने वाले कायर सिपाही चारो तरफ़ से टूट पड़े और सजदे की हालत में गर्दन के पीछे से तलवार फेर कर शहीद कर दिया। क़ातिल ने सर उठाकर बरछी की अनी पर बड़े घमण्ड के साथ रखा और अपने अपराधी साथियों को लड़ाई ख़त्म होने की ख़बर दी। इसके बाद बहुत से महाकायर दुष्ट और पापी मुसलमान सामान लूटने के लिए हुसैन[अ०] के ख़ेमे में चले गए। सामान भी लूटा और ख़ेमों में आग भी लगा दी। जिसके कारण बीबियों और बच्चों को बाहर मैदान में निकलना पड़ा और सेनापति के हुक्म से इन सब बीबियों और बच्चों को रस्सी में बाँध दिया गया। हुसैन[अ०] के बीमार बेटे को उसके बिस्तर से खींचकर हाथों में रस्सी बाँध दी और पावों में बेड़ी डाल दी। यह बीबियाँ और बच्चे जो कहीं न आ सकते थे, न जा सकते थे, इस लड़ाई के क़ैदी बना लिये गये और दूसरे दिन सुबह को उसी हालत से कि उनके सरों पर चादरें तक नहीं थीं, साथ लेकर हुसैन[अ०] और उनके साथियों की लाशें जंगल में बग़ैर गोर गढ़े के छोड़कर कूफ़े की तरफ़ चल पड़े, जहाँ यज़ीद का गवर्नर इब्ने ज़ियाद हुकूमत कर रहा था जो हुसैन[अ०] का सबसे बड़ा दुश्मन था। यह दुख-दर्द की कहानी बहुत बड़ी है और बहुत सी बातें वक़्त की कमी के कारण बयान करने से रह जाती हैं लेकिन हमें हुसैन से भारत का सम्बन्ध बताना और समझाना है।

यह क़ैदी कर्बला से कूफ़े और कूफ़े से शाम यज़ीद की राजधानी को इस तरह लाए गए कि आगे-आगे हुसैन[अ०] और उनके साथियों के सर बरछियों की अनियों से बन्धे हुए थे और पीछे-पीछे ऊँटों पर क़ैदी सवार थे। रास्ते में जिन-जिन शहरों और बाज़ारों से गुज़र हुआ, वहाँ से इस अन्याय और अपराध की ख़बर सारे देश में आग की तरह फैल गयी और बहुत से मुसलमान जिनके दिलों में न्याय और धर्म का ज़रा सा भी ख़याल था, अपने पैग़म्बर[स०] के नवासे हुसैन[अ०] का सोग मनाने लगे और यह साल के साल सोग मनाने की रीति मुसलमानों के धर्म का एक कार्य बन गयी। सोग सारे ही मुसलमान मनाते हैं, मगर तरीक़े ज़रा अलग-अलग हैं।

इस तरह साल के साल घरों के अन्दर, घरों के बाहर मैदानों में बाज़ारों में सोग मनाने का सबसे उत्तम प्रभाव ये है कि हर साल ग्यारह महीने बाद ये समाचार याद आ जाता है और संसार को शिक्षा मिलती है कि जनता की भलाई और सत्य का पालन करने के लिए झूठों और अपराधियों और अधर्मों के मुक़ाबले में इसी तरह डट जाना चाहिए और जान माल किसी चीज़ की परवाह नहीं करना चाहिए। हुसैन[अ०] और उनके साथियों ने जो कुछ किया है वह सिर्फ़ मुसलमानों ही के लिए नहीं किया है बल्कि सारे संसार को सबक़ दिया है इस शिक्षा में किसी धर्म किसी जाति किसी देश का सवाल नहीं है, जो भी इस से फ़ायदा उठाए उसके लिए है।

हमारे भारत देश में यह सोग हर देश और हर मुल्क से ज़्यादा मनाया जाता है और मुसलमानों के अलावा हज़ारों हिन्दू भाई हुसैन को इस तरह मानते हैं और इस तरह सोग मनाते हैं जैसे हुसैन[अ०] उनके अपने हैं और उनकी गिनती बड़े देवताओं में है। उत्तर प्रदेश हो या मध्य प्रदेश, पंजाब हो या बंगाल, हिन्दुस्तान या पाकिस्तान, तिब्बत से रास कुमारी (कन्याकुमारी) तक हिन्दू मुसलमानों के साथ-साथ हर जगह हुसैन[अ०] का सोग मनाने में शरीक होते हैं, ताज़िया रखते हैं, अलम सजाते हैं, रोते हैं, मातम करते हैं, कविताएं पढ़ते है

और फिर ये बात नहीं कि अनपढ़ हिन्दू ही सोग मनाने वाले हैं। बड़े-बड़े विद्वान, पढ़े लिखे हिन्दू हुसैन[अ०] के गुन गाते हुए दिखाई देंगे। हमारे देश के हिन्दू कवि जिन्होंने परदेसी हुसैन[अ०] के लिए कवितायें कहीं हैं, अगर उनके नाम लिखे जाएं तो एक छोटी सी पुस्तक तैयार हो सकती है। भारत में जितनी ज़बानें बोली जाती हैं कोई ज़बान ऐसी नहीं है जिसमें हुसैन[अ०] के लिए कविता न हों। बड़े-बड़े पढ़े लिखे हिन्दुओं ने पुस्तकें लिखी हैं। प्रेमचन्द तो अभी हाल में हमारे सामने मौजूद थे, जिनकी पुस्तक ''कर्बला'' उर्दू ज़बान में छप चुकी है। ऊँची ज़ात के ब्राहम्णों से लेकर गोंद, भील और लम्बाड़ते तक हुसैन[अ०] के चाहने वालों में दिखायी देते हैं।

हिन्दुस्तान में 10 ब्राहम्णों की एक शाखा है जो ''हुसैनी ब्राहम्ण'' कहलाते हैं। यह गंगा, जमना, सरजू, घाघरा के मैदान में इलाहाबाद, गोरखपुर की बस्तियों में ज़्यादा पाये जाते हैं। इनमें दत्त, वेद, झीर, बलि, लाव, मुहार, युनिवाल कितनी ज़ातें हैं। ये लोग पूरान क़ौम के हैं। सुर्ख़ व सफ़ेद और मज़बूत जिस्म वाले होते हैं। महाराजा बनारस, बीना युवा, टकारी, लाल गोला और महाराजा साहब नमकू भी इसी क़ौम से हैं। महाभारत से भी पहले इस क़ौम का पता चलता है। इनके ख़ानदानी ख़िताब महतिया, बख़्शी, रायेज़ादे, सुल्क और राय शाही ज़माने के दिये हुए हैं। इनका सिलसिला बिहार, यू०पी० और पंजाब में दूर तक फैला हुआ है। इन सातों ज़ातों में दत्त बहुत मशहूर हैं। यह दत्त का शब्द संस्कृत के शब्द दाता से निकला है।

ये लोग एशिया के बीच के हिस्सों अफ़ग़ानिस्तान, ईरान, अरब में भी रहे हैं और अपनी तलवार की धाक बिठा चुके हैं। कहानियों, कहावतों और कत्बों में इनका ज़िक्र आया है। शाह मोहम्मद नज़ीर हाशमी की किताब ''शहादते उज़मा'', मिर्ज़ा मोहम्मद अज़ीम बेग की रिपोर्ट 'बन्दोबस्त गुजरात 1868[ई०]', और 'जन्गनामा' पृष्ठ170, 176, अहमद साहब पंजाबी की लिखी हुई पुस्तक से पता चलता है कि दत्त क़ौम के ब्राहम्णों ने कर्बला की लड़ाई में हुसैन[अ०] का साथ दिया था और उनके दुश्मनों से लड़े थे और एक पूर्वी जवान के कव्त (कविता) से ये पता चलता है कि हुसैन[अ०] की शहादत के बाद अमीर मुख़तार के साथ शरीक होकर हुसैन[अ०] के दुश्मनों से बदला लिया था। इस कव्त के बाज़ शेरों का मतलब हम बयान कर रहे हैं। एक जगह है कि ''बुज़दिल सब भाग कर नज़रों से ग़ायब हो गए दत्त लोगों ने हज़रत इमाम हुसैन[अ०] की पूरी-पूरी मदद की और एक क़दम भी मैदान से पीछे न हटे।

दूसरी जगह लिखा है कि ''जब उन्होंने मैदान में फ़तह पाई तो ख़ूब ख़ुशी और फ़तह के नक़्क़ारे बजाए गए शोर हुआ कि क़त्ले हुसैन का बदला ले लिया गया।''

फिर एक जगह लिखा है ''राहिब के सात लड़कों ने हुसैन[अ०] की रिफ़ाक़त का हक़ अदा किया। उन्होंने मज़लूम शहीद पर अपनी जानें क़ुर्बान कर दीं। ऐ हुसैन[अ०] की सन्तान और हुसैन[अ०] के नाम लेने वालो तुम्हारा फ़र्ज़ है कि तुम दत्त लोगों को न भुलाओ।''

शाह मोहम्मद नज़ीर हाशमी की किताब और हमारी किताब ''हुसैन और हिन्दुस्तान'' में यह क़ौल मौजूद है। दत्त लोगों में एक किताब ''हुसैन पोथी'' के नाम से देखी गई है जो कहीं-कहीं किसी ख़ास मौक़े पर पढ़ी और सुनी जाती थी। शाह साहब लिखते हैं किः-

''ग़ाज़ीपुर में राय बहादुर सालिक राम इसी क़ौम से थे और इनके पास कुछ कविताएं इसी तरह की थीं। मुझे खुद भी एक डाक्टर राम लाल पानीपत में मिले जो हुसैनी ब्राहम्ण थे। हमारे हिन्दु भाइयों के कितने ही कुन्बों में ऐसी पुस्तकें और कविताएं, कव्त और मिसालें मिल सकती है जिस से हुसैन और हिन्दुस्तान के सम्बन्ध का ज़्यादा हाल मालूम हो सकता है।

हिन्दुस्तान में बीस बाइस रियासतें ऐसी थीं जहाँ रियासत की तरफ़ से साल के साल हुसैन[अ०] का सोग मनाया जाता था। इसके राजाओं ने मोहर्रम के दिनों में जब उनका लश्कर किसी लड़ाई के कारण शहर के बाहर पड़ा था, जंगल में भी ये सोग मनाया करते थे और एक छोलदारी में अलम वग़ैरा सजाए रखते थे और मजलिस मातम हुआ है। यह बात मैंने एक अंग्रेज़ की रिपोर्ट (Letters from Madratta Camp) से नक़्ल

की है। ग्वालियर के महाराजा हुसैनअ० के नाम पर फ़क़ीर बनते थे और दस मोहर्रम को ताज़िये के साथ पैदल जाते थे। कोई क़ौम हिन्दुस्तान की ऐसी नहीं है जिसमें हुसैनअ० का सोग न मनाया जाता हो, सुना है लाहौर में सिक्खों की तरफ़ से भी एक ताज़िया उठाया जाता है।

हुसैनअ० के मानने वालों में ब्राहम्ण भी मिलेंगे और हरिजन भी। यह है हुसैनअ० और हिन्दुस्तान का सम्बन्ध। मगर इस सम्बन्ध का हाल हमारे भारतवासियों को मालूम नहीं। बहुत कम आदमी इस बात को जानते हैं कि हुसैनअ० ने भारत की तरफ़ आने का इरादा ज़ाहिर किया था और वह हर साल भारत के मेहमान होते हैं। यह बात न जानने की वजह से अंग्रेज़ राज्य के समय कभी-कभी हिन्दू-मुसलमानों में अलम-ताज़िया के कारण झगड़ा हो जाता था। अगर ये भेद सब हिन्दु भाइयों को मालूम होता और उनको यह बता दिया जाता है कि हुसैनअ० तो भारत के मेहमान हैं और तुम्हारा उनका तेरह सौ वर्ष का सम्बन्ध है तो हमें विश्वास है कि कभी ऐसे लड़ाई-झगड़े की नौबत न आती और सब हिन्दू-भाई ताज़िये का आदर करते और हुसैनअ० के सोग में मुसलमानों का साथ देना धर्म की बात समझते।

हुसैनअ० का सोग मनाने में किसी क़ौम और धर्म के आदमी को दुख पहुँचने का कोई कारण ही नहीं है। यह लड़ाई जो कर्बला के मैदान में हुई है किसी दूसरी क़ौम से नहीं हुई थी। मुसलमानों की आपस की लड़ाई थी। एक तरफ़ सच्चे मुसलमान थे, एक तरफ़ नाम के मुसलमान। ऐसे समाचार में किसी क़ौम को हुसैनअ० का सोग मनाने वालों से क्या शिकायत हो सकती है। भारत के रहने वाले मुसलमान हिन्दू सिक्ख ईसाई पारसी किसी धर्म के मानने वाले हों सब से हुसैनअ० का सम्बन्ध है। बात इतनी है कि किसी को ख़बर है किसी को ख़बर नहीं है। हमने अपनी कविता 'कर्बल नगरी' में भी इस सम्बन्ध का वर्णन किया है और अपनी पुस्तक ''हुसैन और हिन्दुस्तान'' में पूरा-पूरा हाल लिखा है।

हमने हुसैन और हिन्दुस्तान के सम्बन्ध का सहारा लेकर अपनी हिन्दी भाषा की कविताओं में हिन्दु-मुस्लिम मेल-जोल की अपील की है जिसके बाज़ शेर हम लिखते हैं:-

(1)

अब जा के हिमालय पर्वत से लय मातम की टकराती है।
उस देश की 'नज्मी' दूर'बला जिस देश पे यह ग़म छाएगा।।

(2)

जब आए हुसैनी सेवा में सब हिन्दु-मुस्लिम एक हुए।
मिल जायेंगे 'नज़्मी' दिल भी कभी, जब उनकी नजर पर बात रही।।

(3)

अपने को जो चाहे 'नज्मी', उसको कौन न चाहे।
भारत माता सोग मनाकर मन हर लें ये हमारे।।

(4)

स्वामी कितनी दूर ते लगा प्रेमी बान,
उठी लहर फुरात से पहुँची हिन्दुस्तान।
भूमि राम कृष्ण की कर्बल का संदेश,
आँसू तुमरे सोग के और गंगा जमनी देश।
दो जग के सहारे क्या कहना।
सत जग के सितारे क्या कहना।।

(5)

इस देश की आँखें भी 'नज्मी' प्यासी थीं हुसैनी दर्शन की।
भारत में उजाला पहुँचा है कर्बल में दरस दिखलाया था।।

+++

♦ मेरा अक़ीदा है कि इस्लाम की तरक़्क़ी उसके मानने वालों की तलवारों की एहसानमन्द नहीं बल्कि हुसैन जैसे औलियाए केराम की कुर्बानियों का नतीजा है। (महात्मा गाँधी)

♦ हुसैनअ० की कुर्बानी हर फ़िरक़े और क़ौम के लिए हिदायत के रास्ते की रौशनी है। (पंडित जवाहर लाल नेहरू)